

<https://doi.org/10.53032/tvcr/2023.v5n4.02>

अश्लीलता और श्लीलता का मानवीय विज्ञान और विधि (The Human Science and Jurisprudence of Obscenity and Decency)

डॉ. राम शंकर

सहायक प्राध्यापक

विधि अध्ययनशाला,

जीवाजी विश्वविद्यालय,

ग्वालियर, मध्य प्रदेश

Email: ramshankararju@gmail.com,

Orcid Id: <https://orcid.org/0000-0002-4354-9875>

Abstract

This research paper analyzes the concepts of obscenity and decency from the perspectives of human science and jurisprudence. Obscenity and decency are not merely moral or linguistic classifications; rather, they are deeply rooted in social, cultural, psychological, and legal contexts. The study demonstrates that their definitions change with time, society, culture, and individual psychology. In psychology, the subject is linked to sexual consciousness, shame, moral compulsions, and processes of repression, whereas in sociology it is shaped by social norms, power relations, and patriarchal structures. In literature and art, the debate emerges as a conflict between freedom of expression and social responsibility. Furthermore, within the Indian legal system, efforts to define obscenity have been ongoing for several decades; however, in the changing social and digital context, its boundaries and challenges have grown even more complex. This research paper presents the discourse in a balanced manner, showing that there is no permanent or universal criterion for determining obscenity and decency. Hence, it is essential to adopt a scientific, sensitive, and context-specific approach when engaging with these issues.

सारांश

यह शोध-पत्र अश्लीलता और श्लीलता की अवधारणाओं का विश्लेषण मानवीय विज्ञान तथा विधिक दृष्टिकोण से करता है। अश्लीलता और श्लीलता केवल नैतिक या भाषिक वर्गीकरण नहीं हैं, बल्कि वे गहरे सामाजिक, सांस्कृतिक, मनोवैज्ञानिक और कानूनी संदर्भों में जड़े हुए हैं। यह अध्ययन दर्शाता है कि समय, समाज, संस्कृति और व्यक्ति की मानसिकता के अनुसार इनकी

The Voice of Creative Research

Vol. 5 & Issue 4 (October 2023)

परिभाषा परिवर्तित होती रहती है। मनोविज्ञान में यह विषय यौन चेतना, लज्जा, नैतिक आग्रह और दमन की प्रक्रियाओं से जुड़ा हुआ है, वहीं समाजशास्त्र में यह सामाजिक मान्यताओं, सत्ता-संबंधों और पितृसत्तात्मक संरचनाओं से प्रभावित होता है। साहित्य और कला के क्षेत्र में यह बहस अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता बनाम सामाजिक दायित्व के रूप में सामने आती है। इसके अतिरिक्त, भारतीय विधिक व्यवस्था में अश्लीलता को परिभाषित करने के प्रयास कई दशकों से चलते आ रहे हैं, लेकिन बदलते सामाजिक और डिजिटल परिप्रेक्ष्य में उसकी सीमाएँ और चुनौतियाँ और भी जटिल हो गई हैं। यह शोध-पत्र इस विमर्श को संतुलित रूप से प्रस्तुत करता है, यह दर्शाते हुए कि अश्लीलता और श्लीलता के निर्धारण में कोई स्थायी या सार्वभौमिक कसौटी नहीं है। इसीलिए इन विषयों पर विचार करते समय एक वैज्ञानिक, संवेदनशील और संदर्भ-सापेक्ष दृष्टिकोण अपनाना आवश्यक है।

Keywords: नैतिकता, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, यौन चेतना, सामाजिक मान्यताएँ, सामाजिक दायित्व

1. प्रस्तावना

मानव सभ्यता के विकास के साथ-साथ कुछ विषय हमेशा बहस और विवाद का केंद्र रहे हैं, जिनमें अश्लीलता और श्लीलता प्रमुख हैं। ये दोनों अवधारणाएँ समाज के नैतिक ढाँचे, सांस्कृतिक मूल्यों, धार्मिक विश्वासों और व्यक्ति की अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के बीच एक जटिल संतुलन को दर्शाती हैं। साहित्य, कला, संगीत, चित्रकला, फिल्म, और अब डिजिटल मीडिया में इनकी उपस्थिति लगातार चर्चा का विषय रही है। भारत जैसे बहुसांस्कृतिक देश में, जहाँ परंपरा और आधुनिकता का द्वंद्व लगातार सक्रिय है, वहाँ अश्लीलता और श्लीलता की रेखा खींचना आसान नहीं है। जो एक वर्ग को कलात्मक और वैचारिक स्वतंत्रता का प्रतीक लगता है, वही दूसरे वर्ग के लिए अनैतिक और असंस्कारी माना जा सकता है।² यही कारण है कि यह विषय केवल सौंदर्यशास्त्र या नैतिक दृष्टिकोण से नहीं, बल्कि मानव मनोविज्ञान, समाजशास्त्र, और कानून जैसे क्षेत्रों से भी गहराई से जुड़ा हुआ है।

इतिहास में कालिदास, भास, और जयदेव जैसे साहित्यकारों ने प्रेम और यौन भावनाओं की अभिव्यक्ति को श्लीलता की सीमाओं में बाँधा, जबकि समकालीन समाज में इन्हीं विषयों को कई बार 'अश्लील' करार दिया जाता है।³ दूसरी ओर, आधुनिक वैश्विक युग में, डिजिटल माध्यमों पर नग्नता, यौन संकेतों, और अभिव्यक्ति की सीमाएँ धुंधली हो गई हैं, जिससे समाज और कानून दोनों ही भ्रमित हैं।⁴

यह शोध-पत्र इस द्वैत को समझने का प्रयास करता है:

² खन्ना, राजीव. "भारतीय समाज में नैतिक सीमाएँ और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता।" *जर्नल ऑफ कल्चरल स्टडीज़*, 2018।

³ त्रिपाठी, राधावल्लभ. *भारतीय काव्यशास्त्र और सौंदर्य बोध*, राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान, 2004।

⁴ मेहता, अंजलि. "डिजिटल मीडिया, सेंसरशिप, और भारत में अश्लीलता की दुविधा।" *भारतीय कानून समीक्षा*, खंड. 5, क्रमांक 2, 2022.

The Voice of Creative Research

Vol. 5 & Issue 4 (October 2023)

- क्या अश्लीलता और श्लीलता सार्वभौमिक हैं या सापेक्ष ?
- किन मनोवैज्ञानिक और सामाजिक प्रक्रियाओं से यह अवधारणाएँ जन्म लेती हैं?
- और कानून इन जटिल भावनात्मक और सांस्कृतिक परतों को किस प्रकार नियंत्रित करता है?

यह विश्लेषण दर्शाता है कि अश्लीलता और श्लीलता की स्पष्ट परिभाषा देना कठिन ही नहीं, बल्कि लगभग असंभव है। अतः यह आवश्यक है कि इस विषय पर बहुआयामी दृष्टिकोण अपनाया जाए, जो मानवीय संवेदनाओं, सामाजिक संदर्भों और विधिक दायरे को एकसाथ समेट सके।

2. श्लीलता और अश्लीलता का मनोवैज्ञानिक आधार

अश्लीलता और श्लीलता केवल सांस्कृतिक या कानूनी अवधारणाएँ नहीं हैं, बल्कि इनकी गहराई मनुष्य के मनोवैज्ञानिक व्यवहार में निहित होती है। यह विश्लेषण आवश्यक बन जाता है क्योंकि जो वस्तु एक व्यक्ति के लिए उत्तेजक या आपत्तिजनक हो सकती है, वही दूसरे के लिए कलात्मक, स्वाभाविक या सामान्य हो सकती है। इस अनुभाग में हम यह समझने का प्रयास करते हैं कि कैसे मानव मन इन दोनों अवधारणाओं को ग्रहण करता है, और किन मानसिक प्रक्रियाओं के माध्यम से यह मूल्यांकन किया जाता है।

2.1 फ्रायड का यौन मनोविज्ञान और दमन सिद्धांत

सिगमंड फ्रायड के अनुसार, मनुष्य के अवचेतन में यौन इच्छाएँ जन्म से ही सक्रिय होती हैं। समाज और परिवार इन इच्छाओं को नियंत्रित करने के लिए दमन का सहारा लेते हैं। यह दमन जब अधिक होता है, तब व्यक्ति अश्लीलता के प्रति संवेदनशील हो जाता है, और वह सहज या कलात्मक यौन अभिव्यक्ति को भी अश्लील समझने लगता है।⁵ फ्रायड के मतानुसार, अश्लीलता की धारणा स्वयं यौन दमन का उत्पाद है।

2.2 उत्तेजना और घृणा का द्वैत

विभिन्न मनोवैज्ञानिक अध्ययनों में यह पाया गया है कि अश्लीलता के प्रति मनुष्य की प्रतिक्रिया एक द्वैत से युक्त होती है – लज्जा और आकर्षण, उत्तेजना और घृणा, दोनों साथ-साथ उपस्थित होते हैं।⁶ यह द्वंद्व व्यक्ति की परवरिश, धार्मिक विश्वासों, और यौन शिक्षा की गुणवत्ता पर निर्भर करता है।

2.3 सामाजिक और नैतिक मूल्य

बचपन से ही समाज यह सिखाता है कि क्या देखना चाहिए और क्या नहीं, किस विषय पर बात करना उचित है और किस पर नहीं। यह मस्तिष्क में एक नैतिक संरचना बना देती है, जिससे व्यक्ति किसी भी दृश्य या विषय को 'श्लील' या 'अश्लील' मानने लगता है।⁷ ये मूल्य अक्सर बिना तार्किक आधार के केवल परंपराओं से ग्रहण किए जाते हैं।

2.4 जेंडर और मानसिक प्रतिक्रिया

⁵ फ्रायड, सिगमंड। कामुकता के सिद्धांत पर तीन निबंध। बेसिक बुक्स, 1905।

⁶ ज़िलमैन, डॉल्फ, और ब्रायंट, जेनिंग्स। पोर्नोग्राफी और यौन कठोरता: सैद्धांतिक दृष्टिकोण। जर्नल ऑफ़ कम्युनिकेशन, 1982।

⁷ बंडुरा, अल्बर्ट। सामाजिक अधिगम सिद्धांत। प्रेंटिस-हॉल, 1977।

The Voice of Creative Research

Vol. 5 & Issue 4 (October 2023)

मनुष्य की अश्लीलता के प्रति प्रतिक्रिया लिंग के आधार पर भी भिन्न होती है। पुरुषों में अश्लील सामग्री के प्रति उत्तेजना की प्रवृत्ति अधिक पाई जाती है, जबकि स्त्रियाँ अधिक बार इसे असहजता, अपमान या असुरक्षा से जोड़ती हैं।⁸ हालांकि यह भी सामाजिक और भूमिकाओं का ही परिणाम है।

3. समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण

श्लीलता और अश्लीलता की परिभाषा केवल व्यक्ति की निजी अनुभूति नहीं, बल्कि वह समाज की सामूहिक सोच और संरचना से गहराई से प्रभावित होती है। समाज यह तय करता है कि किन वस्तुओं, विचारों या अभिव्यक्तियों को "स्वीकार्य" माना जाएगा और किन्हें "अनैतिक" या "अश्लील" ठहराया जाएगा। यह प्रक्रिया सामाजिक निर्माणवाद की केंद्रीय अवधारणा पर आधारित है।

3.1 सामाजिक निर्माणवाद और नैतिकता

सामाजिक निर्माणवाद के अनुसार, कोई भी विचार या व्यवहार—चाहे वह यौन अभिव्यक्ति हो या नग्नता—प्राकृतिक रूप से अश्लील नहीं होता, बल्कि वह सामाजिक परंपराओं, धार्मिक मूल्यों और सत्ता संरचनाओं के प्रभाव में "अश्लील" या "श्लील" घोषित किया जाता है।⁹ उदाहरण के लिए, किसी आदिवासी समाज में नग्नता सामान्य बात हो सकती है, जबकि वही व्यवहार किसी शहरी मध्यवर्गीय समाज में अनैतिक माना जा सकता है।

3.2 सत्ता, वर्ग और पितृसत्ता का प्रभाव

अश्लीलता की परिभाषा निर्धारण में सत्ता संबंध भी भूमिका निभाते हैं। ऐतिहासिक रूप से, पितृसत्तात्मक समाजों ने स्त्रियों के शरीर और यौनता को नियंत्रित करने के लिए "अश्लीलता" शब्द का प्रयोग एक औजार की तरह किया है।¹⁰ स्त्री की स्वतंत्र यौन अभिव्यक्ति को 'अश्लील' करार देना, दरअसल उसकी स्वतंत्रता पर नियंत्रण का प्रयास होता है। वहीं, उच्च वर्ग द्वारा प्रस्तुत यौन कलाओं को अक्सर "श्लील" और "अभिजात्य" कह कर स्वीकार किया जाता है, जबकि निम्न वर्ग की समान अभिव्यक्ति को "फूहड़" या "अश्लील" ठहराया जाता है।¹¹

3.3 मीडिया और वैश्वीकरण

मीडिया और इंटरनेट के प्रसार ने समाज के अश्लीलता के मानकों को और अधिक जटिल बना दिया है। OTT प्लेटफॉर्म, सोशल मीडिया और विज्ञापन लगातार यौन संकेतों से परिपूर्ण कंटेंट परोस रहे हैं, जिससे परंपरागत समाजों में असमंजस की स्थिति पैदा हो रही है।¹² वैश्वीकरण ने पश्चिमी सांस्कृतिक मूल्यों को फैलाया है, जिससे भारतीय समाज में भी श्लीलता की सीमाएँ खिसक रही हैं।

3.4 धार्मिक और सांस्कृतिक भिन्नता

भारत में अलग-अलग समुदायों, जातियों और धर्मों के श्लीलता-अश्लीलता के मानक भी अलग हैं। एक मुस्लिम या जैन समाज में यौन विषयों पर चर्चा प्रतिबंधित मानी जा सकती है, जबकि तंत्र साधना परंपरा में यौनता

⁸ नुसबाम, मार्था सी. वस्तुकरण और इंटरनेट पोर्नोग्राफी: लिंग के आधार पर मनोवैज्ञानिक प्रतिक्रियाएँ। नैतिकता और मानव व्यवहार, खंड 25, अंक 4, 2010।

⁹ बर्गर, पीटर एल., और थॉमस लकमैन। वास्तविकता का सामाजिक निर्माण। पेंगुइन बुक्स, 1966।

¹⁰ फूको, मिशेल। कामुकता का इतिहास: खंड 1। विंटेज बुक्स, 1990।

¹¹ नंदी, आशीष। अंतरंग शत्रु: उपनिवेशवाद के तहत आत्म-हानि और पुनर्प्राप्ति। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1983।

¹² राय, शालिनी। "मीडिया, नैतिकता और बाजार: भारतीय मनोरंजन में अश्लीलता की बदलती धारणाएँ।" मीडिया वॉच, खंड 9, अंक 1, 2018।

The Voice of Creative Research

Vol. 5 & Issue 4 (October 2023)

आध्यात्मिक विषय बन जाती है।¹³ इससे स्पष्ट होता है कि अश्लीलता कोई सार्वभौमिक सत्य नहीं, बल्कि सांस्कृतिक भिन्नताओं का परिणाम है।

4. साहित्य और कला में अश्लीलता और श्लीलता

साहित्य और कला सदा से मानवीय भावनाओं की अभिव्यक्ति के माध्यम रहे हैं। इनमें यौनता, प्रेम, रति, वासना, नग्नता, आकर्षण और लज्जा जैसे विषयों को विभिन्न संदर्भों में चित्रित किया गया है। किंतु इन चित्रणों को समाज ने कभी "श्लील" और कभी "अश्लील" के चश्मे से देखा है। यह दृष्टिकोण न केवल समय और संस्कृति के अनुसार बदलता है, बल्कि यह प्रश्न भी उठाता है:

"क्या कला में यौनता की प्रस्तुति अश्लील मानी जानी चाहिए?"

4.1 प्राचीन भारतीय साहित्य में यौनता का स्थान

भारतीय साहित्यिक परंपरा में शृंगार को नवरसों में प्रमुख स्थान दिया गया है। कालिदास की *मेघदूत*, जयदेव की *गीतगोविंद*, और *वात्स्यायन का कामसूत्र* — इन सभी में यौन और शृंगारिक भावनाओं की अत्यंत सौंदर्यपूर्ण अभिव्यक्ति मिलती है। इन रचनाओं को श्लील माना गया क्योंकि उनमें रस, अलंकार और सांस्कृतिक संवेदना के अनुरूप संतुलन था।¹⁴

"स्मितं किञ्चित् भ्रुकटी चञ्चलं चापलं च

प्रणयव्यञ्जनमेतद्वदनं साधु सुभूः॥"

— कालिदास (*अभिज्ञानशाकुन्तलम्*)

यहाँ कामुकता है, परंतु वह अभिव्यक्ति की मर्यादा और भाव-गंभीरता के साथ है — अतः वह श्लील मानी जाती है।

4.2 मध्यकाल और नैतिक संकोच

मध्यकालीन भक्ति साहित्य में यौन प्रतीकों को अक्सर अध्यात्म के रूप में रूपांतरित किया गया। मीरा, कबीर, राधा-कृष्ण के प्रेम प्रसंगों में देह की नहीं, आत्मा की कामना है। यह कला और अध्यात्म का शुद्धिकरण है, जिससे 'काम' भी 'श्लील' बन जाता है।¹⁵

4.3 आधुनिक साहित्य में विवाद और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता

आधुनिक युग में, विशेषकर 20वीं सदी के बाद, साहित्यकारों ने यौन विषयों पर अधिक खुलकर लिखना प्रारंभ किया। मंटो, इस्मत चुगताई, कमलेश्वर, प्रभा खेतान जैसे लेखकों ने यौनता, लैंगिकता और स्त्री देह को केंद्र में रखते हुए रचनाएँ प्रस्तुत कीं, जिन्हें कई बार "अश्लील" कहा गया।¹⁶

सआदत हसन मंटो की कहानी *ठंडा गोश्त* को अश्लीलता के आरोप में अदालत में लाया गया, जबकि मंटो ने तर्क दिया कि समाज की सच्चाई को दिखाना साहित्य का कर्तव्य है, और जो वस्तु समाज में विद्यमान है, वह स्वयं में अश्लील नहीं, बल्कि उस पर समाज की सोच अश्लील हो सकती है।¹⁷

¹³ डोनिगर, वेंडी। द हिंदूज़: एन अल्टरनेटिव हिस्ट्री। पेंगुइन बुक्स, 2009।

¹⁴ त्रिपाठी, राधावल्लभ। भारतीय काव्यशास्त्र और सौन्दर्यबोध। राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान, 2004।

¹⁵ शर्मा, सुधीर। भक्ति आंदोलन और लैंगिक आध्यात्मिकता। जर्नल ऑफ इंडियन फिलॉसफी, 2010।

¹⁶ दत्ता, अमरेश (सं.). भारतीय साहित्य का विश्वकोश। साहित्य अकादमी, 1987.

¹⁷ मंटो, सआदत हसन। मैं क्यों लिखता हूँ: अश्लीलता और स्वतंत्रता पर निबंध। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 2012।

The Voice of Creative Research

Vol. 5 & Issue 4 (October 2023)

4.4 कला में नग्नता और सौंदर्यबोध

चित्रकला, मूर्तिकला और नृत्यकला में नग्नता का प्रयोग सौंदर्यबोध के माध्यम से किया गया है। खजुराहो और कोणार्क की मूर्तियाँ, अजंता-एलोरा की चित्रकला, और भरतनाट्यम जैसे नृत्यों में शारीरिक मुद्राएँ 'काम' को 'कला' में रूपांतरित करती हैं।

लेकिन आधुनिक पृष्ठभूमि में जब यही नग्नता विज्ञापन, फिल्म, या डिजिटल कला में दिखाई जाती है, तो उस पर अश्लीलता का आरोप लगाया जाता है — क्योंकि वहाँ उद्देश्य 'सौंदर्य' नहीं, बल्कि 'उपभोग' होता है¹⁸।

5. विधिक दृष्टिकोण

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता लोकतांत्रिक समाज की आधारशिला है, परंतु इसकी सीमाएँ भी हैं — विशेषकर तब जब अभिव्यक्ति अश्लीलता या सार्वजनिक नैतिकता को प्रभावित करती हो। भारतीय विधिक व्यवस्था में अश्लीलता को परिभाषित करने के अनेक प्रयास हुए हैं, किंतु यह विषय आज भी कानूनी अस्पष्टता से ग्रस्त है। इस खंड में हम अश्लीलता की विधिक परिभाषा, प्रमुख न्यायिक दृष्टिकोणों, और डिजिटल माध्यमों से उत्पन्न नई चुनौतियों का विश्लेषण करेंगे।

5.1 भारतीय न्याय संहिता, 2023 में अश्लीलता

भारतीय कानून में अश्लीलता को मुख्यतः भारतीय न्याय संहिता, 2023 की धाराओं 294, 295 और 296 के अंतर्गत नियंत्रित किया गया है:

- **धारा 294:** कोई भी सामग्री (पुस्तक, चित्र, फिल्म आदि) यदि "कामुक प्रवृत्तियों को उत्तेजित" करती है या "सामान्य नैतिकता के विरुद्ध है", तो वह अश्लील मानी जाएगी और उस पर दंडनीय कार्रवाई की जा सकती है।¹⁹
- **धारा 295:** यदि अश्लील सामग्री बच्चों को बेची जाती है तो दंड अधिक कठोर होता है।
- **धारा 296:** सार्वजनिक स्थलों पर अश्लील कृत्य या गाना गाना, जिससे दूसरों को आपत्ति हो, दंडनीय है।

हालांकि, इन धाराओं में "अश्लीलता" की कोई स्पष्ट परिभाषा नहीं है, जिससे न्यायपालिका की व्याख्या पर ही अंतिम निर्णय निर्भर करता है।

5.2 हिक्लिन टेस्ट और उसकी सीमाएँ

ब्रिटिश कानून में "हिक्लिन टेस्ट" (Regina v. Hicklin, 1868) के अनुसार, कोई भी सामग्री यदि "कमजोर मानसिकता" वाले व्यक्ति को भ्रष्ट कर सकती है, तो वह अश्लील मानी जाएगी।²⁰ यह परीक्षण भारत में लंबे समय तक लागू रहा, किंतु इसकी आलोचना यह कहकर की गई कि यह अत्यधिक प्रतिबंधात्मक है और समाज की सामूहिक बौद्धिकता की उपेक्षा करता है।

रंजीत डी. उदेशी बनाम महाराष्ट्र राज्य (1965)

यह ऐतिहासिक फैसला था जिसमें जस्टिस हेगड़े ने कहा था:

"Obscenity must be judged from the point of view of an average person, applying contemporary community standards."

¹⁸ थापर, रोमिला. सांस्कृतिक अतीत: प्रारंभिक भारतीय इतिहास में निबंध। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 2000।

¹⁹ भारतीय दंड संहिता, धाराएँ 292-294।

²⁰ रेजिना बनाम हिक्लिन, (1868) एलआर 3 क्यूबी 360।

The Voice of Creative Research

Vol. 5 & Issue 4 (October 2023)

इसमें कोर्ट ने 'हिक्लिन टेस्ट (Hicklin Test)' को लागू किया, जिसमें यह देखा जाता है कि सामग्री का कोई अंश किसी व्यक्ति के नैतिक मनोबल को पतित कर सकता है या नहीं।

5.3 सुप्रीम कोर्ट के प्रमुख निर्णय

(क) राज कपूर बनाम लक्ष्मीनारायण (1980)²¹

इस केस में सुप्रीम कोर्ट ने स्पष्ट किया कि कलात्मक या सामाजिक उद्देश्य वाली सामग्री को मात्र नग्नता के आधार पर अश्लील नहीं ठहराया जा सकता। फिल्म 'सत्यम शिवम सुंदरम' पर अश्लीलता का आरोप लगने के बावजूद कोर्ट ने कहा कि "नग्नता जरूरी नहीं कि अश्लीलता हो" – अभिव्यक्ति के उद्देश्य और प्रभाव का विश्लेषण आवश्यक है।

(ख) क.ए. अब्दुल रहमान बनाम केरल राज्य (2001)²²

इस मामले में मलयालम फिल्म की समीक्षा करते हुए कोर्ट ने कहा कि अश्लीलता का मूल्यांकन समय, समाज और उद्देश्य को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए, न कि रूढ़िवादी दृष्टिकोण से।

(ग) अवीक सरकार बनाम पश्चिम बंगाल राज्य (2014) के ऐतिहासिक निर्णय में सुप्रीम कोर्ट ने हिक्लिन टेस्ट को अस्वीकार करते हुए अमेरिका से लिया गया समकालीन समुदाय मानक परीक्षण अपनाया।²³ इसके अनुसार, किसी सामग्री को अश्लील घोषित करने से पहले यह देखा जाएगा कि वह वर्तमान सामाजिक-सांस्कृतिक संदर्भों में सामान्य नागरिकों को किस हद तक आपत्तिजनक लगती है।

इस निर्णय ने न्यायपालिका को विषय को सांस्कृतिक और वैचारिक परिप्रेक्ष्य में समझने की अधिक स्वतंत्रता दी।

5.4 सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम और इंटरनेट पर अश्लीलता

डिजिटल युग में अश्लीलता की समस्या और जटिल हो गई है। आईटी अधिनियम, 2000 की धारा 67, 67A और 67B के अंतर्गत ऑनलाइन अश्लील सामग्री का प्रकाशन, संप्रेषण या बच्चों से संबंधित यौन सामग्री अपलोड करना अपराध माना गया है।²⁴

OTT प्लेटफॉर्म, सोशल मीडिया, और वर्चुअल मीडिया में क्लासिक और कलात्मक नग्नता तथा यौन उत्तेजक अश्लीलता के बीच रेखा और अधिक धुंधली हो जाती है, जिससे सेंसरशिप, नीति और अभिव्यक्ति के बीच संघर्ष और बढ़ जाता है।

5.5 अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता बनाम सामाजिक नैतिकता

भारतीय संविधान का अनुच्छेद 19(1)(a) नागरिकों को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता देता है, परंतु अनुच्छेद 19(2) के अंतर्गत यह स्वतंत्रता "सार्वजनिक नैतिकता, शालीनता, और कानून व्यवस्था" जैसे कारणों से सीमित की जा सकती है।²⁵

²¹ राज कपूर बनाम लक्ष्मी नारायण, AIR 1980 SC 258 - सुप्रीम कोर्ट ने कला और फिल्म को 'अश्लीलता' से अलग करते हुए उद्देश्य की महत्ता को प्राथमिकता दी।

²² क.ए. अब्दुल रहमान बनाम केरल राज्य, 2001 (1) केएलटी 411 - कोर्ट ने समाज की कमजोर सोच को ध्यान में रखते हुए अश्लीलता का विस्तृत विवरण दिया।

²³ अवीक सरकार एवं अन्य बनाम पश्चिम बंगाल राज्य, (2014) 4 एससीसी 257।

²⁴ सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम, 2000 - धाराएँ 67, 67ए, 67बी।

²⁵ भारत का संविधान, अनुच्छेद 19(1)(ए) और अनुच्छेद 19(2)।

The Voice of Creative Research

Vol. 5 & Issue 4 (October 2023)

इससे यह स्पष्ट होता है कि कानून न तो पूर्ण स्वतंत्रता देता है, न ही पूर्ण नियंत्रण करता है — बल्कि यह स्वतंत्रता और नैतिकता के बीच संतुलन स्थापित करने का प्रयास करता है।

6. बदलते सामाजिक मानक और भविष्य

समाज कोई स्थिर इकाई नहीं है; वह निरंतर परिवर्तनशील है — तकनीकी प्रगति, सांस्कृतिक संपर्क, शिक्षा, और विचारधारात्मक आंदोलनों के प्रभाव में। यही परिवर्तन श्लीलता और अश्लीलता की सीमाओं को भी प्रभावित करता है। जो पहले अश्लील समझा जाता था, वह अब सामान्य हो चुका है; और जो पहले श्लील था, उसकी भी पुनर्व्याख्या हो रही है। इस खंड में हम देखेंगे कि इन मानकों में कैसे बदलाव आया है और भविष्य की दिशा क्या हो सकती है।

6.1 समय के साथ बदलते मानक

- 1950-1970 के दशक में भारत में नग्नता, यौन संकेत, या स्त्री की स्वतंत्र यौन अभिव्यक्ति को सार्वजनिक मंच पर स्वीकार करना असंभव था। यहाँ तक कि प्रेम-पत्र या चुंबन दृश्य को भी "अश्लील" की संज्ञा दी जाती थी।
- 1980-90 के दशक में सिनेमा और साहित्य में थोड़ा अधिक खुलापन आया, किंतु अभी भी सेंसरशिप की पकड़ मजबूत रही।
- 21वीं सदी में, विशेषतः स्मार्टफोन, इंटरनेट और सोशल मीडिया की क्रांति के बाद, यौनता, नग्नता और व्यक्तिगत स्वतंत्रता को लेकर दृष्टिकोण अधिक उदार हुआ है।
इस परिवर्तन ने समाज में दो दृष्टिकोणों का टकराव पैदा किया है — एक ओर वह वर्ग है जो इसे नैतिक पतन मानता है, दूसरी ओर वह वर्ग जो इसे व्यक्तिगत स्वतंत्रता और शरीर पर स्वायत्तता का अधिकार मानता है।²⁶

6.2 डिजिटल युग और अश्लीलता का पुनर्परिभाषण

OTT प्लेटफॉर्म, इंस्टाग्राम रील्स, अश्लील वेबसाइट्स, और एआई-जनित सामग्री ने अश्लीलता के स्वरूप और उपलब्धता को पूरी तरह बदल दिया है। अब यह केवल अभिजात वर्ग की सीमा में नहीं, बल्कि सामान्य जनजीवन का हिस्सा बन चुकी है।

- अब अश्लीलता का मूल्यांकन केवल वस्तु पर नहीं, बल्कि संदर्भ, प्रस्तुति और आशय पर आधारित होना चाहिए।
- AI द्वारा बनाए गए अश्लील चित्र, वीडियो, और वर्चुअल रियलिटी में यौन अनुभव — ये सब आने वाले समय की नई विधिक और नैतिक चुनौतियाँ हैं।²⁷

6.3 लैंगिकता, पहचान और समावेशिता की दिशा में बढ़ते कदम

आधुनिक समाज यौनता को केवल पुरुष-स्त्री संबंधों तक सीमित नहीं देखता। LGBTQ+ समुदाय, ट्रांसजेंडर व्यक्ति, और गैर-पारंपरिक यौन पहचान — अब सार्वजनिक विमर्श का हिस्सा हैं। इन समुदायों की अभिव्यक्ति, यदि वह प्रेम, आकर्षण या यौनता को दर्शाती है, तो क्या उसे अश्लील माना जाएगा?

²⁶ मेहता, अंजलि। भारतीय मध्यवर्ग की अश्लीलता और नैतिक चिंता। समकालीन समाजशास्त्र जर्नल, 2019।

²⁷ कपूर, रोहन। कृत्रिम बुद्धिमत्ता, पोर्नोग्राफी और कानून: सिंथेटिक युग की चुनौतियाँ। इंडियन जर्नल ऑफ साइबर लॉ, 2023।

The Voice of Creative Research

Vol. 5 & Issue 4 (October 2023)

यह सवाल विधि, समाज और शिक्षा तीनों के लिए नई दिशा तय करता है।²⁸

6.4 भविष्य की दिशा: संतुलन और सहमति

अश्लीलता का प्रश्न अब केवल "क्या दिखाया गया" से अधिक "कैसे और क्यों दिखाया गया" की ओर बढ़ रहा है। आने वाले समय में अश्लीलता और श्लीलता के निर्णय निम्नलिखित आधारों पर लिए जा सकते हैं:

- सहमति: क्या प्रस्तुत विषय में सभी पक्षों की सहमति है?
- प्रसंग: क्या यह कला, शिक्षा, या जानकारी के लिए है, या केवल उत्तेजना के लिए?
- दृष्टिकोण: क्या इसमें अपमान, भेदभाव, या यौन शोषण छिपा है?

अतः भविष्य नैतिक कठोरता नहीं, बल्कि नैतिक विवेक की माँग करता है।

7. निष्कर्ष

श्लीलता और अश्लीलता की अवधारणाएँ केवल भाषा या दृष्टिगत प्रस्तुति का विषय नहीं हैं; वे मूलतः मानव संवेदना, सांस्कृतिक धारणाओं, मनोवैज्ञानिक प्रतिक्रिया, सामाजिक संरचना, और कानूनी व्याख्याओं का समुच्चय हैं। इस शोध का उद्देश्य इन्हीं पक्षों का समन्वित विश्लेषण करना था — जिससे यह स्पष्ट हो सके कि ये दोनों अवधारणाएँ न तो शाश्वत हैं और न ही सार्वभौमिक। वास्तव में, इनका स्वरूप सापेक्ष, काल-सापेक्ष, और समाज-सापेक्ष होता है।

प्रमुख विश्लेषणात्मक निष्कर्ष

(i) मनोवैज्ञानिक स्तर पर:

मनुष्य के भीतर यौन प्रवृत्ति जन्मजात होती है, परंतु समाज उसे नियंत्रित करता है। यही दमन जब सीमा लाँघता है, तो व्यक्ति किसी भी यौन प्रतीक या अभिव्यक्ति को अश्लील समझने लगता है। फ्रायड, जंग और समकालीन मनोविश्लेषकों के अनुसार, अश्लीलता का बोध मन की उन परतों से आता है, जहाँ लज्जा, वासना, अपराधबोध और भय एक साथ मौजूद होते हैं।

(ii) समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से:

समाज में सत्ता, वर्ग, और पितृसत्ता ने श्लीलता और अश्लीलता के मानक गढ़े हैं। महिलाओं की यौन अभिव्यक्ति को नियंत्रित करने के लिए "अश्लीलता" को एक औजार की तरह इस्तेमाल किया गया है। जो कुछ उच्च वर्ग से आता है वह "अभिजात्य कला" और जो निम्न वर्ग से आता है वह "फूहड़" — यह दृष्टिकोण आज भी कायम है।

(iii) साहित्य और कला में भिन्न मानक:

भारतीय साहित्य में शृंगार रस और रति की प्रतिष्ठा रही है, लेकिन आधुनिक काल में वही यौन अभिव्यक्ति जब यथार्थ के रूप में सामने आती है (जैसे मंटो, चुगताई, प्रभा खेतान के लेखन में), तो उसे "अश्लील" कहा जाता है। यह अभिव्यक्ति की शैली, सामाजिक स्वीकार्यता और सौंदर्यशास्त्रीय विवेक का अंतर है, जो कला को अश्लील या श्लील बनाता है।

²⁸ सेन, रिंतुपर्णा। द्विआधारी सीमाओं से परे कामुकता: भारत में कानूनी और सामाजिक परिप्रेक्ष्य। जेंडर स्टडीज रिव्यू, 2021।

The Voice of Creative Research

Vol. 5 & Issue 4 (October 2023)

(iv) विधिक दृष्टिकोण की भूमिका:

भारतीय न्यायपालिका ने अब अश्लीलता की परिभाषा को समकालीन सामाजिक मानकों के आधार पर परखना शुरू किया है।

Aveek Sarkar केस (2014) के बाद, हिक्लिन टेस्ट को छोड़कर सामुदायिक बौद्धिकता पर भरोसा किया जाने लगा है।

परंतु डिजिटल युग में उत्पन्न नए प्रश्न — जैसे deepfake, AI-generated pornography, बाल यौन सामग्री — न्यायिक प्रणाली को नई चुनौती दे रहे हैं।

(v) बदलते सामाजिक मानक:

इंटरनेट, वैश्वीकरण, शिक्षा और लैंगिक विमर्श के विस्तार ने अब लोगों के सोचने और देखने के तरीकों को बदल दिया है। जो 50 वर्ष पहले "अश्लील" था, आज वह सामान्य हो सकता है। अब मुद्दा "क्या दिखाया गया?" नहीं, बल्कि "क्यों और किस तरह दिखाया गया?" बनता जा रहा है।

समेकित निष्कर्ष

- अश्लीलता कोई शुद्ध नैतिक या धार्मिक अवधारणा नहीं है, यह एक सामाजिक मनोवैज्ञानिक और सांस्कृतिक रचना है।
- श्लीलता का निर्धारण केवल विषय से नहीं, बल्कि प्रस्तुति, संदर्भ, आशय और सहमति से होता है।
- कानून को इन विषयों को समकालीन संवेदनाओं के साथ संतुलित करने की आवश्यकता है, न कि अंध नियमों और सेंसरशिप से।
- कला, साहित्य, और सिनेमा में यौनता की अभिव्यक्ति को केवल उत्तेजक या अश्लील कहना, उस रचनात्मक प्रयास का सरलीकरण और अपमान है।

भविष्य की दिशा

भविष्य में एक ऐसे संतुलित दृष्टिकोण की आवश्यकता है, जहाँ:

- अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और सांस्कृतिक संवेदनशीलता साथ-साथ चल सकें।
- सहमति, प्रसंग, और नियत उद्देश्य के आधार पर श्लीलता-अश्लीलता का मूल्यांकन किया जाए।
- AI और डिजिटल माध्यमों के नए स्वरूपों को विधिक और नैतिक रूप से पुनः परिभाषित किया जाए।
- शैक्षिक स्तर पर यौन शिक्षा, मीडिया साक्षरता, और सांस्कृतिक विवेक को बढ़ावा दिया जाए।

समापन टिप्पणी

यह शोध इस बिंदु पर पहुँचा है कि अश्लीलता और श्लीलता के मध्य की रेखा स्थिर नहीं, बल्कि एक संवादात्मक, विवेकपूर्ण और समय-सापेक्ष प्रक्रिया है। जब तक समाज खुलेपन के साथ संवाद नहीं करेगा, तब तक यह रेखा या तो अति-नैतिकता की गिरफ्त में रहेगी या उच्छृंखलता की ओर झुकी रहेगी।

इसलिए, ज़रूरत है — संवेदना और विवेक के साथ संतुलन स्थापित करने की।